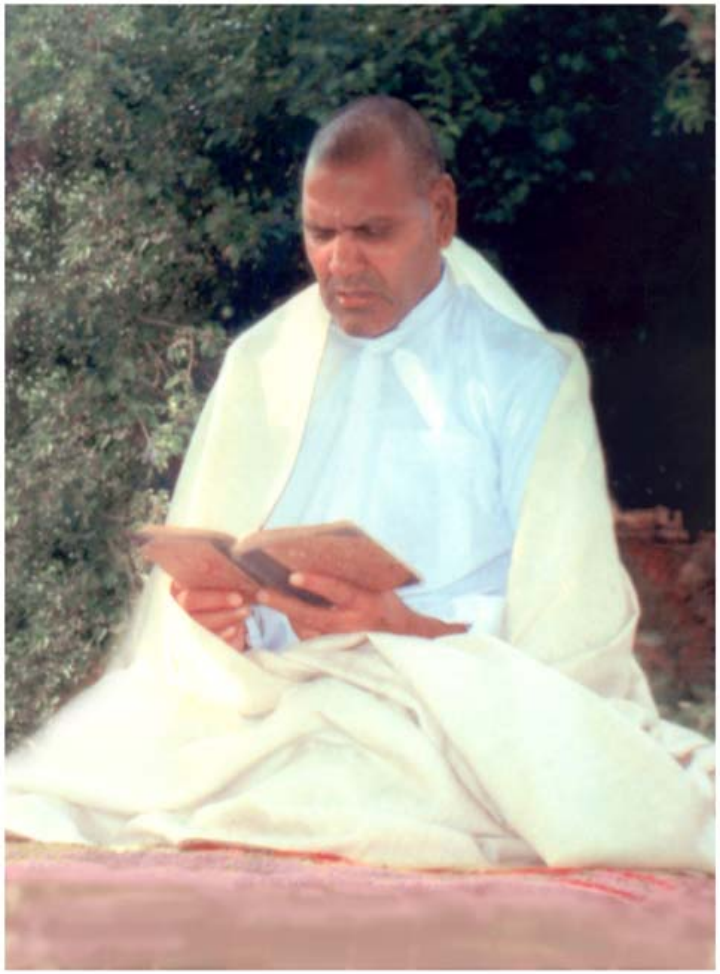

BhramRishi Krishan DuttJi Maharaj Patrika August 2013

॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

भगवन् ! मैं प्रातःकाल की पवित्र वेला में आपके चरणों की वन्दना कर रहा हूँ। वन्दना का अभिप्राय है कि मैं अपने हृदय को उज्ज्वल बना रहा हूँ। आपकी शुद्ध पवित्र अमृत सम्वेदना के साथ प्रभु ! मैं अपने हृदय को निर्मल और स्वच्छ जल से स्वच्छ बनाना चाहता हूँ। हे प्रभु ! तेरा जो अमृतमयी ज्ञान है, अमृतमयी जो तेरी नम्रता है, अमृतमयी जो तेरी उदारता है, अमृतमयी जो तेरा उद्‌गम है, अमृतमयी जो हृदय है, अमृतमयी जो तेरा यह जगत् है, अमृतमयी, जो प्रभु मेरी ज्ञान की एक कामना है, उससे मैं अपने हृदय को पवित्र बनाना चाहता हूँ। हे प्रभु ! तू कितना उद्‌गम है, तू कितना उदार है, तू कितना महान् है, तू कितना व्यापक है, तेरी कितनी उज्जवलता प्रभु ! इस सँसार में व्यापक रही है। हे प्रभु ! तुम कितने व्यापक हो और मैं कितना अल्पज्ञता में रमण करता हूँ। मुझे यह प्रतीत नहीं है कि इससे आगे मुझे क्या भोजन प्राप्त होगा। परन्तु प्रभु ! आप मेरे उस भोजन को भी जानते हैं जो आगे आने वाला भोजन मुझे प्राप्त होगा। उनमें जो अमृत मुझे प्राप्त होगा उसको भी आप स्वतः जानने वाले हैं, परन्तु मेरे लिए कोई मार्ग ऐसा नहीं, मेरे लिए कोई स्थान ऐसा नहीं, जहाँ प्रभु ! मैं पाप कर्म करने के लिए उद्यत हो जाऊँ। प्रभु ! वह कौन सा स्थान है जहाँ मैं पाप कर्म कर सकता हूँ। परन्तु प्रभु ! पाप मैं उस काल में करता रहता हूँ, जब प्रभु ! आपका जो आनन्दमयी स्रोत है वह मेरे से पृथक हो जाता है। मैं उस आनन्दमयी जो ज्ञान है, अमृतमयी जो पवित्रवत् है मैं उसको अपने से दूर नहीं चाहता। हे जगत् रचन् अस्वनम्। प्रभु मैं आपको बारम्बार नमस्कार कह रहा हूँ। आप मेरी इस प्रातःकाल की नमः को स्वीकार करो क्योंकि आप उदार हैं, महान हैं, पवित्र हैं, शुद्ध हैं, आनन्दवत स्रोत हैं। हे प्रभु ! इसलिए मैं आपको बारम्बार नमस्कार कर रहा हूँ।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 491 समग्र अंक : 566
वर्ष : 41 समग्र वर्ष : 48

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	यज्ञोमयी स्वरूप	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-16
4.	पूर्णिमा का व्रत	पूज्यपाद-गुरुदेव	17-31
5.	योगेश्वर श्री कृष्ण भगवान्	पूज्यपाद-गुरुदेव	32-37
6.	जन्मदिन की शुभकामनाएँ		38
7.	दान, पुस्तकों की सूची व सूचना		39-40

श्रावणी पर्व

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा और पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की पावमानी प्रेरणा से रक्षाबन्धन के शुभावसर पर दिनाँक 21-8-2013 दिन बुधवार को प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी लाक्षागृह, बरनावा में सामवेद ब्रह्म-पारायण महायज्ञ का आयोजन श्री गाँधी धाम समिति द्वारा किया जा रहा है। आप सभी इस यज्ञ में अपने परिवार, सगे-सम्बन्धियों एवम् मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

यज्ञोमयी-स्वरूप

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप हैं। याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है और वह उसी में वास कर रहा है तो इसलिए परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप माना गया है। परम्परागतों से ऋषि-मुनि उस महान् यज्ञोमयी स्वरूप का वर्णन करते रहे हैं और विचारवेत्ता बड़ी ऊँची ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ते रहे हैं। इसलिए परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप माना है। जितना भी यह संसार है अथवा ब्रह्माण्ड है एक प्रकार के तारतम्य से मानो वह कटिबद्ध है और परमात्मा इस प्रकार रहता है जैसे माला में धागा होता है और उस धागे में नाना मनके पिरोये जाते हैं तो वह सूत्र की भाँति रहता है। तो इसीलिए इस ब्रह्माण्ड रूपी यज्ञशाला का वह परमपिता परमात्मा ही तो मानो सूत्र कहलाता है और उसी में यह पिरोया हुआ है, उसी में रत्त हो रहा है। तो इसीलिए हम परमपिता परमात्मा को यज्ञोमयी स्वरूप स्वीकार करते हुए उसकी हम अपने में आराधना करें और उसको अपना आराध्यदेव स्वीकार करते हुए उस परमपिता परमात्मा की इस संसार रूपी यज्ञशाला को हम प्रायः अपने में विचार-विनिमय करने लगें।

परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ हैं

मेरे प्यारे ! वह परमपिता परमात्मा इस ब्रह्माण्ड का स्वयँ ब्रह्मा है। क्योंकि वह ब्रह्माण्ड उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है और उसी में वह वास करता रहता है। तो वह परमपिता परमात्मा एक अनन्तमयी धारा में रत्त रहने वाला है। इसीलिए परमपिता परमात्मा को ब्रह्मा के रूप में वर्णित किया गया है और आत्मा यजमान है ओर यह पञ्च महाभूत मानो देखा होता के रूप में विद्यमान हैं। हमारे यहाँ ऋषि-मुनि परम्परागतों से बेटा ! आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार के इस यज्ञ स्वरूप को ले करके उड़ाने उड़ते रहे हैं और उनका एक ही मन्तव्य रहा है कि हम परमपिता परमात्मा को चहुँ ओर मानो दृष्टिपात करते रहें। कोई ऐसी स्थली नहीं है जहाँ वह परमपिता परमात्मा वास न करता हो। वह सर्वज्ञ है, सर्वत्रता में विद्यमान रहता है।

महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज का विद्यालय

तो मेरे प्यारे ! आज मैं तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहाँ नैतिक और देखो आध्यात्मिकवाद दोनों की चर्चाएँ प्रायः हमें प्राप्त होती रही हैं। मैं इन वाक्यों को पूर्व काल में भी बेटा ! मैंने तुम्हें प्रगट किया है। आज भी मुझे बारम्बार वह वाक् स्मरण आते रहते हैं क्योंकि वह वाक् सदैव नवीन बने रहते हैं उनमें वृद्धपन न होने से ही स्वरूप में मानो देखो वह सदैव नवीनता में परणित रहते हैं। तो मेरे प्यारे ! आज का हमारा वाक् एक रसता के लिए उद्गीत गा रहा है। मेरे पुत्रो ! देखो मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहाँ ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन करते रहे हैं और उनका अध्ययन का जो माध्यम था वह बड़ा विचित्र। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज प्रातःकालीन मानो देखो **नैतिक शिक्षा** देते रहे हैं। क्योंकि हमारे यहाँ विद्यालयों में जहाँ पठन-पाठन का क्रम चलता है, पठन-पाठन के अनुसार मानो देखो क्रियात्मक बौद्धिक वाक्यों को भी वर्णित किया गया है। यह परम्परागतों से बेटा ! अपने में विचित्रता में परणित रहा है कि **आचार्य ब्रह्मचारियों के मध्य में विद्यमान हो करके अपने नैतिक और आत्मिक शिक्षा**

को देने का सदैव प्रयास करते रहे हैं, जिससे मानो देखो मध्य में याग भी हो और उपासना के माध्यम से मानो देखो उनको नैतिकवाद में परणित किया जाए और पठन-पाठन की पद्धति उसके पश्चात् मानो देखो उसका क्रियाकलाप प्रारम्भ होता है। तो मेरे प्यारे ! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहाँ एक नियमावली बनी हुई परम्परागतों की भाँति क्या मुनिवरो ! ब्रह्मचारी अपनी-अपनी पंक्तियों में विद्यमान हैं और अपनी योग्यता के अनुसार पंक्तियाँ लगी हुई हैं और आचार्य देखो उनके मध्य में विद्यमान हो करके न्योदा में वेद-मन्त्रों का अध्ययन कराया और न्योदा में वेद-मन्त्रों का अध्ययन कराते हुए कहा हे ब्रह्मचारियो तुम्हें याज्ञिक बनना है, मानो तुम्हें अपने जीवन को ऊर्ध्वा में ले जाना है। तो मेरे प्यारे ! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज इस प्रकार की नैतिकवाद की शिक्षा देते–देखो यह आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकार से तुम्हें आत्मिक यागों में परणित होना है। जैसे यजमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके वह मानो देखो भौतिक देवपूजा करते हुए और अपने अन्तर्हृदयं में जो आत्मा है उसका उद्बुद्ध करने के लिए वह तत्पर होता है। इसी प्रकार हे यजमन ब्राहां मानो हे ब्रह्मचारियों तुम अपने में याज्ञिक बनो। मेरे प्यारे ! देखो, जब यह उपदेश दे रहे थे न्योदा में वेद-मन्त्रों का अध्ययन करते उद्गीत गा रहे थे–वर्णनम् ब्रह्मा तपमं ब्रहे क्रतम। हे ब्रह्मचारियों तुम देखो अपने को वर करके, परमपिता परमात्मा को अपना वरणीय बना करके और तुम अपने में याज्ञिक बनो जिससे तुम्हारा मानवीय जीवन पवित्रता की धारा में रत्त हो जाए।

यजमान कितने होताओं के द्वारा याग करे?

मेरे प्यारे ! देखो जैसे यह न्योदा में वेद-मन्त्रों का उद्गीत गा रहे थे। याग के ऊपर अपनी ऋषिवर उड़ान उड़ रहे थे और यह उच्चारण कर रहे थे कि प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना चाहिए, प्रत्येक मानव को सुगन्धित में रत्त रहना चाहिए क्योंकि विचारों में सुगन्धि, क्रियाकलापों में सुगन्धि और मानो देखो उनके

पठन-पाठन में भी सुगन्धि होनी चाहिए। इस प्रकार का अवधान होना चाहिए।

मेरे पुत्रो ! देखो इतने में यज्ञदत्त नाम का ब्रह्मचारी और एक रोहणीकृतिका ब्रह्मचारी, दोनों उपस्थित हुए। उन्होंने एक रूपक बनाया और उन्होंने कहा हे भगवन्, हे देव, हे ब्रह्मवेत्ता हम यह जानना चाहते हैं कि आप याग की बड़ी विवेचना प्रगट करते रहते हैं परन्तु देखो यह यजमान याग करना चाहता है कितने होताओं के द्वारा यजमान याग करे? बेटा ! देखो उसमें कितना उन्होंने अपने विस्तृत विचारों को दिया है और आध्यात्मिकवाद से कितना सुगठित याग माना है। उन्होंने कहा, याज्ञवल्क्य मुनि बोले क्या यदि याग करना है तो मानम ब्रह्मा वर्णास्सुतम देवत्वाम् मानो देखो **चौबीस होताओं के द्वारा याग होना चाहिए।** तो उन्होंने बेटा ! इस मानवीय शरीर को मापने का प्रयास किया और इस मानो देखो भौतिक पिण्ड में, पिण्ड को यज्ञशाला के रूप में वर्णन करते हुए कहा है, क्या इसमें चौबीस होताओं के द्वारा याग हो रहा है। इसमें बेटा ! दस प्राण हैं, दस इन्द्रियाँ हैं, मन, बुद्धि और चित्त अहंकार है। मानो यह चौबीस होताओं के द्वारा याग उन्होंने स्वीकार किया और यह कहा कि इस प्रकार चौबीस होताओं के द्वारा याग होना चाहिए, जिस याग में मानो देखो अपना-अपना अवधान किया जाता है। तो मेरे प्यारे ! देखो चौबीस होताओं में सबसे प्रथम मानो देखो पाँच ज्ञानेन्द्रियों में सर्वत्र मानो महत्तत्त्वों, महाभूतों की आभा निहित रहती है और उसमें जो कर्म किया जाता है वह पंच ज्ञानेन्द्रियों में विद्यमान रहता है। और दस प्राण हैं बेटा ! जो अपने-अपने रूप में नृत्य करते रहते हैं। जैसे प्राण, अपान है यह नाना मानो देखो ऊर्ध्वा में, ध्रुवा में ले जाने वाला है और यही मानो परमाणुवाद को देखो अरबों खरबों परमाणुओं का आदान-प्रदान करता रहता है। तो इसी प्रकार अपने दस प्राण हैं अपने-अपने में, क्रियाकलापों में सदैव तत्पर रहते हैं। तो मुनिवरो ! देखो दस प्राण, दस इन्द्रियाँ, मैं इनकी विवेचना नहीं कर रहा हूँ

केवल तुम्हें परिचय देने आया हूँ और परिचय यह है कि मुनिवरो ! देखो दस प्राण हैं–प्राण, अपान, व्यान, समान और मुनिवरो देखो उदान यह पंच प्राण कहलाते हैं। नाग, देवदत्त, धनञ्जय, कुरु और कृकल यह पांच प्राण यह उप प्राण मुनिवरो ! देखो यह दस प्राण हैं। प्राणों का द्वितीय विशेष मानो देखो उनका विभाजन नहीं होता। संसार में जब रचना का भाग होता है तो यह दस प्राण हैं मानो देखो जो ब्रह्माण्ड में अपनी गतियाँ कर रहे हैं और उसी गति के आधार पर यह ब्रह्माण्ड अपने में गतिशील हो रहा है। और मुनिवरो ! देखो पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं इन **पांचों ज्ञानेन्द्रियों में पञ्च महाभूतों का अवधान होता रहता है और पंच ज्ञान में देखो इसमें कर्म की प्रतिष्ठा होती है।** इसी प्रकार देखो जब आन्तरिक जगत में प्रवेश करते हैं तो बेटा ! मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार यह मानो देखो चतुषः कहलाता है। तो यह चौबीस होताओं के द्वारा यजमान याग करता है। जब यजमान अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होता है तो यह चौबीस होताओं को अग्रणीय बना करके वह स्वाहा कहता है, और कहता है प्राणाय, स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा और उदानाय स्वाहा कह करके हुत करता है। क्योंकि यही तो संसार को भोगतव्य में ले जाते हैं। तो इस प्रकार मुनिवरो ! देखो यागाम ब्रह्मणे तो यह चौबीस होताओं के द्वारा यज्ञशाला में यजमान याग करे।

सत्रह होताओं के द्वारा याग

बेटा ! जब ब्रह्मचारियों ने यह श्रवण किया तो यज्ञदत्त ने यह प्रश्न किया हे प्रभु ! यजमान याग करना चाहता है तो यह कितने होताओं के द्वारा याग करे? तो उन्होंने, याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया क्या यह मानो सत्रह होताओं के द्वारा याग करे। बेटा ! वह सत्रह होता कौन से हैं? मानो देखो दस प्राण हैं, पञ्च महाभूत हैं, उनकी सूक्ष्म धाराएँ हैं। पञ्च महाभूतों की सूक्ष्म कृणिका है और मुनिवरो ! देखो मन और बुद्धि यह सत्रह तत्त्व कहलाते हैं। सत्रह के द्वारा ही मानो देखो यजमान याज्ञम ब्रह्मे होता बना करके याग करे। मुनिवरो ! देखो

जब इस शरीर को त्यागा जाता है तो **सत्रह तत्त्वों का मानो देखो सूक्ष्म शरीर कहलाता है** यह मानो देखो जिसमें दस प्राण हैं, पंच तन्मात्राएं हैं और मन और बुद्धि कहलाती है। यह मानो देखो सत्रह होताओं के द्वारा सूक्ष्म शरीर यज्ञशाला के रूप में परणित होता है। जब भी इस शरीर को त्यागा जाता है तो बेटा ! देखो सत्रह अवयवों का बन करके यह शरीर चला जाता है। मेरे प्यारे ! देखो इस मानो देखो अवग्रहे वासनाओं को अपने में ग्रहण करता रहता है और वायु मण्डल में, वायु में, लोकों में रमण करता हुआ पुनः मानो देखो जैसे सँस्कार होते हैं उसी के आधार पर यह देखो शरीरों को भी प्राप्त करता रहता है। तो इसी प्रकार ऋषि ने, याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा है हे ब्रह्मचारियों यदि तुम याग करना चाहते हो तो सत्रह मानो सूक्ष्म शरीर को यज्ञशाला को ले करके तुम याग करो, जिससे तुम मानो देखो भू भुवः स्वः इस ब्रह्माण्ड की तीन मात्राओं में तुम अग्रणीय बन सको। और मात्रावादी बन करके तीन लोकों को विजय कर लो और देखो इसी में र्भू भुवःस्वः इसी में तीन मात्रा हैं–ओ, ऊ और म, और मुनिवरो ! देखो तीन ही पदार्थ हैं–आत्मा, परमात्मा, प्रकृति और तीन ही मानो देखो शब्दों की मात्रा हैं अ, ऊ और म। तो इसी प्रकार बेटा ! देखो तीन, रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण माने जाते हैं इनको अपने में जानते हुए सागर से पार होने का प्रयास करो क्योंकि यही तो मानो सूक्ष्मत्तम कहलाता है।

ग्यारह होताओं के द्वारा याग

मेरे प्यारे ! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार परिचय दिया तो उस समय ब्रह्मचारी ने कहा, यज्ञदत्त ने हे प्रभु ! यह भी मेरी माता हमें वर्णन कराती रही है। हम यह जानना चाहते हैं मानो देखो यजमान याग करना चाहता है कितने होता होने चाहिए? तो उस समय ऋषि कहते हैं क्या देखो यजमान याग करना चाहता है तो अमृतम, मानो ब्रहे अस्सुतम ग्यारह होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। मानो देखो ग्यारह होता कौन से हैं? बेटा ! पांच ज्ञानेन्द्रियाँ और पांच कर्मेन्द्रियाँ

और ग्यारवाँ मन मानो देखो ध्रुव की भाँति रहता है। तो बेटा ! देखो वह इस प्रकार ग्यारह होताओं के द्वारा याग करे। ग्यारह होताओं का मुनिवरो ! देखो हमारे यहाँ बड़ा महत्त्व माना गया है क्योंकि जितनी भी ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, कर्मेन्द्रियाँ हैं यह सब एक रूप हो करके और मानो देखो मन इनसे जकड़ा। क्योंकि **मन का सम्बन्ध आत्मा से है और देखो आत्मा का सम्बन्ध मन से है और मन का समन्वय बेटा ! इन्द्रियों से है और इन्द्रियों का सम्बन्ध प्रकृति के मण्डल से है** और प्रकृति के मण्डल का समन्वय बेटा ! देखो सूक्ष्म प्रकृति से कहलाता है। जो सूक्ष्मतम कहलाता है। यहाँ यह मन आत्मा से प्रकाश लेता है और देखो इन्द्रियों को प्रकाशित करता है और इन्द्रियों को प्रकाशित करके यह मानो देखो रथी कहलाता है। मन ही तो रथी है प्रकृति मण्डल में। तो बेटा ! देखो जब यह ले जाता है तो **सूक्ष्म प्रकृति का मण्डल ही यह मन माना गया है** जिसके ऊपर बेटा ! मानव अपने में अन्वेषण करता रहा है। तो मेरे प्यारे ! देखो ग्यारह होताओं के द्वारा यजमान जब याग करता है तो इसलिए कहता है क्या पांच ज्ञानेन्द्रियाँ पांच कर्मेन्द्रियाँ इनको एकाग्र करके और मन के द्वारा, मानो देखो मनम ब्रह्मे मृग की भाँति बेटा ! वह स्वाहा याग करने वाला हो। इन्हीं ग्यारह को संयम में बनाता हुआ, ग्यारह को अपने वशीभूत करता हुआ जब याग करता है तो बेटा ! यह इस लोक को विजय कर लेता है। यह त्रिलोकों को विजय कर लेता है। तो इसलिए वेद का ऋषि कहता है ग्यारहम भूतम ब्रह्मे भूताम ब्रहे ग्यारह हमारे यहाँ ग्यारह होताओं का बड़ा वर्णन महत्त्व माना गया है। तो इसलिए हमारे यहाँ यागों में प्रीति होनी चाहिए और याग होने चाहिए परन्तु देखो याग ग्याहर होताओं के द्वारा हो।

नौ होताओं के द्वारा याग

मेरे प्यारे ! देखो ऋषि ने जब इस प्रकार वर्णन किया तो उस समय यज्ञदत्त ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु जब माता की लोरियों का पान करते रहे हैं तो माताओं ने हमें यह वर्णन कराया है। हम यह जानना

चाहते हैं कि यजमान याग करना चाहता है कितने होताओं के द्वारा याग होना चाहिए? उन्होंने कहा देखो यह नौ, नौ के द्वारा होना चाहिए। जब मानो शरीर को परमपिता परमात्मा ने जब इसकी रचना की यज्ञशाला रूप बना करके मेरे प्यारे ! इस मानव शरीर की रचना की तो मुनिवरो ! देखो उस रचनाकार ने इस शरीर में नौ द्वारों का अवधान किया है, **यह नौ द्वार कहलाते हैं। बेटा !** देखो दो नेत्रों के छिद्र हैं, दो नासिका के छिद्र हैं, एक मुखारबिन्दु है और मुनिवरो ! देखो दो उपस्थ और ग्रीवा के छिद्र कहलाते हैं। और मुनिवरो ! दो श्रोत्रों के छिद्र हैं यह नौ द्वार कहलाते हैं। नौ द्वारों पर बेटा ! नौ देवता विद्यमान रहते हैं। मानो देखो ! जैसे वाणी पर अत्रि है और देखो नेत्रों में जगदग्नि और विश्वामित्र है। इसी प्रकार मेरे प्यारे ! घ्राण में कश्यप और देखो वशिष्ठ कहलाता है और मुनिवरो ! देखो जब श्रोत्रों में जाते हैं तो वहाँ मानो देखो ब्रीही वेतु भंगनम ब्रहे वहाँ मेरे प्यारे ! व्रेणकेतु और सम्भूति विद्यमान हैं और वरुण भी विद्यमान रहता है। मानो चन्द्रमा और चन्द्रमा का उपस्थ स्थान है। पृथ्वी का मानो देखो ध्रुवास्थान है और मुनिवरो ! यही देवता, दोनों देवता नासिका के छिद्रों में विद्यमान हैं। तो मेरे प्यारे ! देखो परमात्मा ने यह शरीर रूपी यज्ञशाला का जब रचिता ने निर्माण किया तो बेटा ! यह नौ द्वारों वाले शरीर का निर्माण किया। **यह नौ द्वार अयोध्या कहलाते हैं,** यही तो अयोध्या है। मानो देखो जब हमारे यहाँ संसार में आने के पश्चात् **जब देखो भगवान् मनु ने जब अयोध्या का निर्माण किया तो बेटा ! यह अयोध्या उस समय समुद्र के तट पर थी** और देखो उस समय भगवान् मनु ने अयोध्या का निर्माण किया जैसे परमात्मा ने इस मानव शरीर का निर्माण किया, इसमें नौ द्वार हैं। बेटा ! नौ द्वार अष्ट चक्रा, नौ द्वारों वाली यह पुरी है। यह अयोध्या पुरी है जो किसी से विजय न हो सके। तो मेरे प्यारे ! देखो अमृतम नौ द्वारों के देवताओं को जान करके और देवताओं को अग्रणीय बना करके, विचार बना करके जब वह स्वाहा कहता है। प्राण को अग्रणीय बना करके स्वाहा कहता है। देवताओं को अग्रणीय

बना करके स्वाहा कहता है। मेरे प्यारे ! देखो नौ द्वारों से नौ होताओं के द्वारा यजमान को याग करना चाहिए। इनको संयम में बनाता हुआ जब याग करता है तो यह भुवः लोक को विजय कर लेता है।

सप्त होताओं के द्वारा याग

मेरे प्यारे ! देखो उस समय अमृतम ब्रह्मा वर्णस्सुतिही। जब इस प्रकार ऋषि ने वर्णन किया तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज से बेटा। यज्ञदत्त ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु ! यजमान याग करना चाहता है कितने होताओं के द्वारा याग करें? उन्होंने कहा यजमान याग करना चाहता है तो यह अमृतम, मानो देखो सप्त होताओं के द्वारा याग करे। बेटा ! सप्त होता कौन से हैं? जो सात ऋषि विद्यमान रहते हैं–दो नेत्रों के द्वार पर हैं, एक वाणी पर है, दो घ्राण में हैं और मुनिवरो ! देखो दो श्रोत्रों में विद्यमान हैं। मेरे प्यारे ! **देखो इन होताओं के द्वारा याग करे, इनको पवित्र बनाए।** नेत्रों से सुदृष्टिपान करता रहे और मुनिवरो ! देखो वाणी से सु-रस को पान करता रहे और मुनिवरो ! देखो वह नासिका में ब्रह्मे पृथ्वी से अपना समन्वय कर सु-सुगन्धि को पान करता रहे। सु-शब्दों को लेता रहे और सु-शब्दों को ले करके इनका साकल्य बना करके बेटा ! जब वह याग करता है तो याग में परणित होता हुआ अपने को मानो याग में अवृतो को वह स्वःलोक को विजय कर लेता है। मेरे प्यारे ! जब यजमान इस प्रकार के यागों में परणित हो जाता है तो वही तो मानो देखो वृत्तियाँ कहलाती हैं। इसी को जान करके सागर से पार होना है। तो आओ मेरे प्यारे ! ऋषि ने वर्णन किया क्या सप्त होताओं के द्वारा यजमान याग करे। सात होता होने चाहिए जिससे **सप्त होताओं का याग करने वाला यजमान बेटा ! देखो अपने मानवीय मानवत्व को विजय कर लेता है, द्यु में प्रवेश हो जाता है।** तो मेरे प्यारे ! देखो अपने में रत्त होता हुआ अपने संसार को विजेता बन करके सागर से पार हो जाता है।

पञ्च होताओं के द्वारा याग

इस प्रकार जब बेटा ! ऋषि ने वर्णन किया तो याज्ञवल्क्य से ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु ! यजमान याग करना चाहता है कितने होता हों? उन्होंने कहा पंच महाभूतों से, पंच होताओं के द्वारा याग होना चाहिए। बेटा ! पंच महाभूतों के द्वारा वह होता कहलाते हैं। मेरे प्यारे ! देखो जैसे हमारे यहाँ देखो सबसे प्रथम पृथ्वी है, जल है, अग्नि है और वायु है और अन्तरिक्ष मानो देखो उसको जानता हुआ और इसका साकल्य बना करके बेटा ! जब याग करता है। मेरे प्यारे ! देखो गुरुत्व, तरलत्व, तेजोमयी यह तीन प्रकार के परमाणु हैं जिनके ऊपर विज्ञान स्थिर रहता है। विज्ञानवेत्ता जब बेटा ! विज्ञानशाला में अपनी में प्रवेश करते हैं तो यह तीन परमाणुओं को ले करके अन्वेषण करते हैं। यन्त्रों का निर्माण करते हैं और वायु उनको गति देने वाला है, अन्तरिक्ष में वह गतिवान रहते हैं। तो बेटा ! देखो पंच महाभूतों को जान करके और जब वह याग करता है तो बेटा ! पंचीकरण को अपने में विजय कर लेता है। **मेरे प्यारे ! आत्मा के लोक को जान लेता है।** आत्मा उसी लोक में विद्यमान है, हृदय उसी लोक में विद्यमान है। वह हृदयग्राही बन करके हृदय मानो देखो अपने में हृदय हृदय का समन्वय करता हुआ बेटा ! यज्ञ में प्रवेश कर जाता है। तो मेरे प्यारे ! देखो वह स्वःलोक को विजय करता हुआ पंचीकरण प्रकृति को अपने में विजय कर लेता है और आत्मा परमात्मा से अपना मिलान करता है। वह बेटा ! **योगेश्वर कहलाता है।** नाना प्रकार के मण्डलों में रमण करता हुआ, नाना प्रकार के लघु मस्तिष्कों को जानता हुआ इस सागर से पार हो जाता है।

तीन होताओं के द्वारा याग

मेरे प्यारे ! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु ! यजमान याग करना चाहता हे भगवन् ! कितने होताओं के द्वारा याग करे? उन्होंने कहा कि तीन होताओं के द्वारा याग करे। बेटा !

तीन होता कौन से हैं? मानो सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण यह तीन होता कहलाते हैं। मेरे प्यारे ! देखो सतोगुण में विष्णु है, रजोगुण में शिव है और तमोगुण में ब्रह्म कहलाता है। तो मेरे प्यारे ! देखो वह ब्रह्मा है अमृतम, देखो जब माता में तीनों प्रकार के गुण होते हैं। सतोगुण से पालन है, रजोगुण से शासन है और तमोगुण में बेटा ! देखो उत्पत्ति का मूल विद्यमान रहता है। इन तीनों को जान करके एक ही सूत्र के मनके हैं और जो इनको एक सूत्र का मनका स्वीकार करके बेटा ! देखो रजोगुण, तमोगुण की प्रवृत्तियों को जानता हुआ बेटा ! देखो साकल्य बनाता है वह बेटा ! देखो हुत करता है। **वह परमात्मा की कृति को जानता है** और तीनों गुण मानो देखो उस ब्रह्माण्ड में पिरोये हुए हैं, लोक लोकान्तरों में रहते हैं। जब माता देखो तमोगुण में प्रवेश करती है तो वहाँ सतोगुण भी मिश्रित रहता है, रजोगुण भी मिश्रित रहता है। इसी प्रकार मेरे प्यारे ! सतोगुण में भी माँ की भावना होती है। पितर की भावना होती है परन्तु देखो वह पालना के मूल में विद्यमान रहती हैं। इसी प्रकार रजोगुण में अनुशासन है–अनुशासन मानव की प्रत्येक इन्द्रियों के ऊपर, रूप में जाओगे तो इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन पर यदि किसी सभा में जाते हो तो वाणी पर अनुशासन हो यदि तुम गृह में विद्यमान हो तो अपनी इन्द्रियों पर अनुशासन हो। तो मेरे प्यारे ! देखो अनुशासन ही अनुशासन हैं **जब मानव अनुशासित रहता है तो जीवन में उसका कल्याण होता है।** तो आओ मेरे प्यारे ! मैं तुम्हें विशेष चर्चा नहीं केवल विवेचना देने नहीं, सूक्ष्म परिचय देने के लिए आया हूँ। जब उन्होंने देखो तीनों गुणों का वर्णन किया। माता देखो वही तमोगुण है, वही रजोगुण और वही सतोगुण कहलाता है। तीनों मनके एक-दूसरे के पूरक कहलाते हैं। तो मेरे प्यारे ! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया। उन्होंने कहा ब्रह्मचारियों तीन होताओं के द्वारा तुम याग करो।

दो होता के द्वारा याग

मेरे प्यारे ! यज्ञदत्त ने कहा प्रभु ! यजमान याग करना चाहता है कितने होताओं के द्वारा याग हो? उन्होंने कहा कि दो होता होने

चाहिए। दो होताओं के द्वारा याग सम्पन्नता को प्राप्त हो सकता है। उन्होंने कहा दो होता कौन से हैं? बेटा देखो ! प्रकृति और ब्रह्म हैं। मानो देखो दोनों का ही इस संसार में व्यापार चल रहा है। प्रकृति अपना विभक्त होती रहती है, परमात्मा उनमें गति प्रदान करते रहते हैं। तो बेटा ! यह याग हो रहा है। यज्ञशाला अपने में यज्ञोमयी स्वरूप को प्राप्त हो रही है।

एक होता से याग

मेरे प्यारे ! उन्होंने कहा एक होता होना चाहिए। वह ब्रह्म का उपासक होना चाहिए और **ब्रह्म का यह यज्ञ है** मानो ब्रह्म को अपने अन्तर्हृदय में धारण करते हुए मानो देखो उसी में, याग में परणित हो जाओ। एक ही होता के द्वारा याग होना चाहिए, वह ब्रह्म है और ब्रह्म का जो उपास्य होता है वही बेटा ! देखो साधना में वही पवित्रता को प्राप्त होता है, वह महानता की ज्योति को प्राप्त कर लेता है। वही अनन्तमयी धारा में परणित होता हुआ अपने में मानो देखो अपनेपन को प्राप्त कर लेता है।

आओ मेरे प्यारे ! मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट करना नहीं चाहता हूँ। विचार-विनिमय क्या वेद के ऋषि ने बेटा ! इस प्रकार देखो यज्ञशाला का वर्णन किया। यज्ञ अपने में मानो देखो कितना विशिष्ठ है इसकी विवेचना करने लगूँगा तो बेटा ! कई समय की आवश्यकता है, कई दिवस चाहिए मानो वर्षों चाहिए इसकी व्याख्या करने के लिए। आज तो केवल मैं तुम्हें संक्षिप्त परिचय दे रहा हूँ क्या **हृदय और हृदय से जगत और जगत हृदय में जब समाहित हो जाता है तो याज्ञिक देखो याग में सफलता को प्राप्त कर लेता है।** तो मेरे प्यारे ! देखो आज का विचार अब यह सम्पन्न होने जा रहा है। अब मेरे प्यारे ! महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महर्षि महानन्द मुनि जी के उद्‌गार

ओ३म् देवाम् भूतम भवीही वर्णस्सुतम देवाम् भविता मनाः।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अथवा मेरे भद्र ऋषि मण्डल। अभी-अभी

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे अथवा गागर में सागर को भरण कर रहे थे। हमें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे हम याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में विद्यमान हैं। हम अपने में ऐसा अनुभव करते रहते हैं क्या जब गागर में सागर की कल्पना की जाती है। आज जहाँ हमारी यह वाणी जा रही है वहाँ एक याग सम्पन्न हुआ है। मेरा अन्तरात्मा याग से सदैव प्रसन्नत्व को प्राप्त होता रहता है और मैं मानो देखो यजमान को अपनी सुकामना देता रहता हूँ, सु-आशीष देता रहता हूँ। **हे यजमान ! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे** और देखो तेरे गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता रहे। क्योंकि **द्रव्य का सदुपयोग होना ही गृह को महान् बनाना है। अपने को महान् बनाना है।** द्रव्य का दुरुपयोग होना गृह को दूषित बनाना है और अपने को मानो देखो नारकिक बनाना है। तो इसलिए द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। द्रव्य का दुरुपयोग ही मृत्यु है और **द्रव्य का सदुपयोग होना ही जीवन और प्रकाश माना गया है।** तो आज मैं केवल यह कि मेरे अमृतम, हे यजमान तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। आज मैं कोई विशेष चर्चा नहीं दूँगा।

आधुनिक-काल

मैं कई समय से उच्चारण करता रहा हूँ क्या देखो आधुनिक यह जो काल है यह वाममार्ग का काल कहलाता है। देखो मैं यजमान को अपना आशीष अपनी विचारधारा प्रगट करते हुए हे यजमान तू ऐसे काल में तू याग कर रहा है जो यह वाममार्ग का काल कहलाता है। यहाँ वाममार्ग उसे कहते हैं जो उल्टे मार्ग पर गमन कर रहा है। जहाँ सुरा, सुन्दरी और मानो द्रव्य की लोलुपतता में मानव देखो ललाहित हो रहा है। वह सुन्दरी चाहता है और द्रव्य और सुरा में परणित होना चाहता है। राष्ट्र और प्रजा दोनों एक ही तुल्य माने जाते हैं। नाना प्रकार की रूढ़िवाद में देखो राजा अपने में परणित हो रहा है। हे राजा यदि तू अपने राष्ट्र को उन्नत बनाना चाहता है तो तू याज्ञिक

बन और अपने राष्ट्र से नाना प्रकार की रूढ़ियों को नष्ट करने वाला बन क्योंकि देखो **धर्म कर्त्तव्यवाद को कहते हैं।** तेरे राष्ट्र में कर्त्तव्यवाद होना चाहिए जैसे विद्यालयों में आचार्य अपने कर्त्तव्य का पालन करता है इसी प्रकार देखो राजा भी अपने इस मानो राष्ट्र को, कोई भी राजा का राष्ट्र हो परन्तु उसको अपना विश्वविद्यालय स्वीकार करे और कर्त्तव्य का पालन करता हुआ धर्माम भूतम् ब्रह्मे वह धर्म को अपनाये और वह मानो देखो रूढ़िवाद को नष्ट करने वाला हो। क्योंकि मैं वर्तमान काल में यह दृष्टिपात कर रहा हूँ क्या जहाँ भी रूढ़िवाद पनप रहा है ईश्वर के नाम पर, जो नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बन गई हैं उन्हें देखो अमृतम, वह धर्म नहीं देखो वह रूढ़ि कहलाती है। **धर्म केवल एक होता है। धर्म केवल एक है जो मानव की इन्द्रियों में समाहित है।** जो कर्त्तव्यवाद में समाहित रहता है और रूढ़ियाँ अनेक रहती हैं, रूढ़ियों में देखो कोई न कोई कृतियाँ हैं। ईश्वर के नाम पर रूढ़ि हैं। एक रूढ़ि दूसरे के रक्त की पिपासी बनी हुई हैं। इसलिए देखो राष्ट्र में, समाज में देखो यह उग्रवाद छा रहा है। उग्रवाद का एक ही परिणाम है कि वह देखो अपने में ईश्वर के नाम पर जो धर्मों को क्या रूढ़ियों का विभाजन हो रहा है। इन रूढ़ियों के मानने वालों में मानो देखो उग्रवाद छा गया है। वह अग्नि में बलवती, कर्त्तव्यवाद न रह करके वह केवल देखो अधिकार की पुकार करता रहता है। **अरे मानव ! तू कर्त्तव्य का पालन कर, अधिकार तुझे स्वतः प्राप्त हो जायेगा।** यदि तू कर्त्तव्य कर नहीं पायेगा और अधिकार की पुकार करता रहेगा तो रक्त भरी क्रान्ति स्वतः प्रवेश हो जाएगी और यह रक्तमयी जगत बन जायेगा। तो मैं यह वाक इसलिए हे पूज्यपाद मैं राजा को कहता हूँ हे राजन !....

शेष अनुपलब्ध

दिनाँक : 20 मार्च, 1992

समय : प्रातः 11 बजे

स्थान : ग्राम लोहड्डा

॥ ओ३म् ॥

पूर्णिमा का व्रत

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! अभी-अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ। हम तुम्हारे समक्ष वेदों का मनोहर गान गा रहे थे। यह तो आज तुम्हें प्रतीत हो गया होगा कि जिन वेद-मन्त्रों का हम आपके समक्ष पाठ कर रहे थे, उन मन्त्रों का वेदों ने किस महानूता से गायन किया है। उसमें कैसा माधुर्य्य था, कैसी सुन्दरता है, उस वेद पाठ में कैसी मधुर शिक्षाएं दी हैं कि आज हम उस विद्या को प्राप्त कर अपने जीवन को कैसा सुन्दर बना सकते हैं। आज के वेद पाठ में हमें यह प्रतीत हो रहा है कि उसमें कोई विद्या ऐसी नहीं कही जो अव्यवहारिक हो। **परमात्मा ने वेदों में सर्व विद्या का प्रसार किया है जिससे मानव व संसार का तथा लोक लोकान्तर वासियों के जीवन का हर प्रकार से विकास हो सके।** आज के वेद-मन्त्र यही मधुर शिक्षाएँ प्रदान कर रहे थे। वह परमात्मा कैसा महान् और कैसा देवों का देव है जो हमें इन सर्व विद्याओं को प्रदान करता है और उनका ज्ञान कराता है। इन मन्त्रों में हम, प्रभु की याचना कर रहे थे और उच्च स्वरों से गान कर रहे थे कि परमात्मन् हमें ऊँचा बनाने वाले हैं, आपकी इन सुन्दर योजनाओं से महान् दुखःसागर से तर कर आपकी शरण चले आते हैं। इन मनोहर मंत्रों में हम गान कर रहे थे, हे विधाता ! हमारे लिए यह कैसा अद्भुत तथा सुन्दर संसार रचा है। यही आज के वेद पाठ में वर्णित किया है।

एक समय देखिये, महाराज विष्णु अपने आसन पर विराजमान थे। आदि प्रजा, महाराज विष्णु के समक्ष पहुँची और निवेदन किया

कि भगवन् हम क्या करें? हमें कोई उपाय बताइये। उस समय विष्णु भगवान् बोले कि **संसार में जाओ और उच्च कर्म करो और उस महान्ता को प्राप्त करो।**

एक समय देवर्षि नारद मुनि ने यही प्रश्न किया था। वह देवर्षि नारद, मृत्यु मण्डल से भ्रमण करते हुए, भगवान् नारायण के समक्ष जा पहुँचे और बोले कि 'मृत्युलोक के मानव बहुत ही दुखित होते जा रहे हैं और दुःख सागर में डूबे जा रहे हैं। उनके कल्याण के लिए भी कोई योजना बनाई है? तब भगवान् नारायण ने कहा कि जाओ प्रजा को आदेश दो कि पूर्णिमा का व्रत धारण करें, उससे वास्तव में मानव समाज का कल्याण होगा। देवर्षि नारद ने जब यह संदेश मृत्युलोक पहुँचाया तो प्राणियों ने पूछा कि भगवन् यह पूर्णिमा का व्रत कैसा होता है? तो नारद जी पुनः नारायण महाराज के पास पहुँचे और पूर्णिमा व्रत का विवरण पूछा तो नारायण महाराज बोले कि **जिस व्रत को धारण करो उसे पूर्णता से करो, जैसे भी नियम बनाओ वे ऐसे पूर्ण हों जैसे पूर्णिमा का चन्द्रमा पूर्ण कलाओं से युक्त होता है। यही पूर्णिमा का व्रत है।** और जो मानव व्रत धारण कर उसको सम्पूर्ण रूप से नहीं करता तो उसका जीवन ऐसा होता है, जैसे एक मानव की नौका भंवर में पड़ी हुई हो और उसका जीवन ऐसे डगमगाया करता है भंवर में डगमगाती नौका सदृश। इसको **पूर्णमदः** कहते हैं?

अच्छा मुनिवरो ! **आज हम को ऐसा व्रत धारण करना है और अपने नियम इस प्रकार पूर्ण बनायें कि जिससे हमारा जीवन उच्च तथा महान् हो।** हम विधाता से यही याचना किया करते हैं। जैसे कि जब तक हम इस संसार में जीवित रहेंगे हम कदापि मिथ्या उच्चारण नहीं करेंगे। यही पूर्णिमा का कृत्य है। **इन्हीं का नाम व्रत है।** और जैसे हमने पूर्व स्थान में कहा था कि अन्न का त्याग, क्षुधा से पीड़ित होना, उपवास करना आदि से महान् लाभ नहीं होता, जो हम, पूर्ण पूर्णमदः करेंगे जैसे कि पूर्णिमा

के चांद में पूर्णता होती है, तभी हम अपने जीवन को पूर्ण बनाने में समर्थ हो सकते हैं। किसी भी कार्य को अधूरा न छोड़ कर उस महान् व्रत को धारण करेंगे, तभी हमारा व्रत सफल वह हमारा वास्तविक कल्याण दायक हो सकता है।

मानव के कल्याण की योजना

जब नारद जी नारायण महाराज के समक्ष थे तो, उन्होंने कहा कि देवर्षि, मृत मंडल तो महान् दुःख का सागर है। इससे निस्तार के लिए **यह महान् योजना बनाई है कि जो आगे कर्म करने हैं वह शुभ करने हैं, तो इस प्रयत्न में ही मानव का कल्याण निहित है।** देखो जैसे, अजयमेध यज्ञ करें, गोमेध यज्ञ करें, तो यह तो भौतिक यज्ञ हो गए। परन्तु हमें आध्यात्मिक यज्ञ भी करना चाहिए। **आध्यात्मिक यज्ञ का अर्थ जिसमें हमारी आत्मा का विकास हो,** जैसे अग्नि ऊपर को उठती चली जाती है ऐसे आत्मा को ऊपर उठाने का यत्न करना चाहिए। जिसका जैसा आचरण होगा वैसा ही वह उससे सम्बन्धित रमण करता है। जब यह आत्मा ऊपर के लोकों में भ्रमण करता है और अच्छे कर्म में रहता है तो वह उन चन्द्रादि, महान् उच्च लोकों में पहुँच जाता है।

ऐसे ही जहाँ महाराज विष्णु का राज्य है विष्णु लोक कहलाता है वह सूर्य मंडल भी कहा जाता है, जहाँ देवर्षि नारद पहुँचे, हमने पीछे कई स्थानों में कहा है। मुनिवरो ! विष्णु का अर्थ—जो हमारा पालन पोषण करने वाला है, जो सबको नियन्त्रण में रखने वाला है। परमात्मा ! विष्णु नाम सूर्य का है, परन्तु हम तो लोकों का वर्णन कर रहे हैं तो **विष्णु-लोक** से अभिप्राय जहाँ विष्णु राज्य कर रहे हैं, जहाँ नाना प्रकार की महान् योजनाएँ बनती हैं, जो पवित्र तथा तपस्वी आत्माओं का आवास है। वहाँ अग्नि के परमाणुओं से निर्मित शरीरों में आग्नेय आत्माएँ रहती हैं, वहाँ की आत्माओं का दार्शनिक समाज विद्यमान है जो दार्शनिकता से विचार करती हैं वहाँ क्लिष्ट आत्माएँ नहीं होतीं।

इनसे भी आगे बृहस्पति लोक माने गए हैं। इन मधुलोकों में पहुँच कर इनसे भी ऊपर को मधुलोकों का स्थान हैं जहाँ नाना भगवन्ती योनि हैं। **भगवन्ती योनि उसको कहते हैं** जिसको गंधर्व अनुमति लोक कहा जाता है। यहाँ बृहस्पति को गन्धर्वलोक कहा जाता है। जहाँ रहने वाले गन्धर्व हों वह गन्धर्वलोक कहलाता है। और श्रेष्ठ कर्म करते हुए शुद्ध आत्माएँ, लोक, लोकांतरों में भ्रमण करती हुई प्रभु को, परमात्मा को प्राप्त होती हैं।

जैसे मानव योगी समाधिस्थ होकर, मूलाधार में जाता है, तो नाभि चक्र, हृदय चक्र, कंठ चक्र में जाता है और फिर त्रिवेणी चक्र में होता हुआ आगे ब्रह्मरन्ध्र में पहुँचता है, और आगे शून्य चक्र में रमण करता हुआ, यह आत्मा भ्रमण करता हुआ पृथ्वी मंडल से आग्नेय सूर्यादि लोकों में पहुँचता है, जहाँ विष्णु समान तेजस्वी आत्माएँ ही निवास करती हैं। यदि हम चाहें तो इस प्रकार हम आत्मा के आधार से, विष्णु लोक में पहुँचे विष्णु समान विष्णु बन सकते हैं। **विष्णु ज्ञानी को कहते हैं, जो परमात्मा के गुणों को धारण करने वाला है,** जिससे सबका पोषण होता है, विश्वन्ति शब्द से जिस विष्णु शब्द की रचना हुई है। उच्च कर्म करने वाला इस प्रकार विष्णु कहा जाता है।

वेद पाठ के मन्त्रों में स्थल-स्थल पर इन्हीं सौंदर्यमत्ता का पाठ किया है। तो हमने जैसे कहा है कि देवर्षि नारद जब नारायण महाराज के समक्ष पहुँच गए तो उन्होंने कहा - जो मानव मेरे व्रत को पूर्ण नहीं करेगा उसका जन्म अधूरा रह जाएगा। इसलिए **मानव को मेरा यह सन्देश है कि मेरी वेदवाणी के अनुसार उस पूर्णता को प्राप्त करने के अर्थ, व्रत धारण करें और पूर्णिमा के चांद के सदृश अपने जीवन को पूर्ण बनाएँ।**

कैसा अलौकिक ज्ञान है, परमात्मा का। प्रत्येक पदार्थ और उनके सूक्ष्म से सूक्ष्म परमाणु हमें यही पूर्णता का ज्ञान दे रहे हैं।

परन्तु देखिए चन्द्रमा का प्रकाश घटता बढ़ता रहता है, यह क्यों होता है? इसके उत्तर में हमारे दार्शनिक समाज में जो आदि ऋषियों का नियुक्त हुआ, कहा है कि लोमश मुनि महाराज ने तत्व मुनि महाराज से एक प्रश्न किया। उस दार्शनिक समाज ने कहा कि यह परमात्मा का अलौकिक नियम है, कि चन्द्रमा की शक्ति घटती बढ़ती रहती है। इसी नियम से चन्द्रमा महान् शीतलता रूपी वनस्पतियों तथा पृथ्वी के अन्न का पोषण करता है और यदि इसकी कलाएँ घटे न, तो सदैव शीतलता ही होने से किसी वनस्पति आदि का उत्पन्न होना असम्भव हो जाएगा।

तो दूसरे दार्शनिक ने कहा, नहीं केवल यही कारण नहीं, कुछ और भी है, इस चन्द्र की कलाएँ जिस परमात्मा में रमण करती हैं, जहाँ से आती हैं, उसकी महान् शीतलता उसी में समा जाती हैं यह उस प्रभु की अलौकिकता है। तब इसमें शमीक मुनि तथा मार्कण्डेयादि महर्षि ने कहा और महान् प्रमाण उपस्थित किए कि हमने तो जो भौतिक विज्ञान के अनुकूल कुछ ऐसा पाया है, कि रावण के पुत्र नारायणतक–जब सूर्य की ज्योति जाती है, तो वह उसके आधीन है और उस ज्योति से प्रकाशित होकर पूर्णता को प्राप्त होता है, और पुनः जब कलाएँ घटती हैं तो उसी में समा जाती हैं। तब किसी अन्य मुनि ने कहा कि यह वाक्य भी माननीय नहीं हमने तो यह सुना है कि सर्व सृष्टि सब परमात्मा के आधीन है, जब परमात्मा के आधीन है तो सूर्य के आधीन कैसे बन गया?

इस पर आदि दार्शनिकों ने कहा कि यह प्रमाण सिद्ध है कि सर्व संसार परमात्मा के, परमपिता के आधीन है परन्तु भौतिक जगत में देखा जाता है कि, माता-पिता, जननी भी होती है और पिता भी, जो महान् हमारा लालन-पोषण करता है। ऐसे ही भौतिक सृष्टि में, सूर्य चन्द्रमा का पिता के समान है, जो अपनी महान् किरणों से उसको पोषण कर उसको उच्च बना देता है। तो इन सब में परमपिता परमात्मा ही है और प्रकृति तो सब की माता के

समान है। **परमात्मा से यह सब प्राण आ रहा है, सविता सत्ता आ रही है और यह सविता बन हर प्रकार से लाभ पहुँचा रहे हैं।**

दार्शनिकों ने कहा जब सूर्य, चन्द्र का पिता है, तो परस्पर समीप क्यों नहीं हो जाते? इसका उत्तर दार्शनिकों ने दिया कि चन्द्र सूर्य मंडल के निचले भाग में है, यह सूर्य का अधिकारी क्रम है कि सूर्य की ज्योति से क्रमशः बढ़ता हुआ, उसकी किरणों से पूर्णता को प्राप्त होता है तो पूर्णिमा का चन्द्र कहलाता है।

अब देखिए वेद ने कहा है कि मानव तेरी अवस्था भी ऐसी ही है, जो परमात्मा ने बनाई है। दो पक्षों के समान, हमारे लिए विचारणीय है, एक शुक्ल पक्ष समान जिसमें मानव का उत्कर्ष होता है और एक कृष्ण पक्ष सदृश जिसमें अवनति हो जाती है।

बेटा ! आज मानव का जीवन, चन्द्र के शुक्ल पक्ष के समान पूर्ण हुआ बैठा है, परन्तु कल प्रतीत नहीं, इसका कारण कैसे बन जाए, कौन सा काल इसके समक्ष आए, जो मानव आज राजा बना बैठा है कल को पता नहीं भिक्षुक बन जाये ! यह उन्नति व अवनति के दो भेद हैं, जो साधन रूप है, जिस पर दृढ़ता पूर्वक आचरण से, उच्च कर्त्तव्य के पालन से वह उस पूर्णता को धारण रख सकता है और सूर्य की तरह सर्व जगत को अपने प्रकाश से आलोकित कर सकता है। जैसे मुनिवरो ! किसी ने देखा युधिष्ठर को, वह उस लाक्षागृह में थे वहाँ से बच गए और अपने कर्त्तव्यों पर दृढ़ रहे। उनका भाग्य कर्म उच्च था, कि फिर महाभारत के संग्राम में विजयी हुए। आज महाराज युधिष्ठर, धर्म पुत्र के नाम से कहे जाते हैं, यह उनके महान् उच्च कर्म की महान्ता थी।

तो हम कह रहे थे कि मानव के, दो पक्षों के समान, कृष्ण पक्ष, कठिनाईयों का काल है, जिसका अन्त उज्ज्वल शुक्ल पक्ष में

होता है जो बहुत ही सुखदायक होता है, सुविधाएं प्राप्त होती हैं। इस प्रकार मानव को आपत्ति काल में दृढ़ रहना, अपने कर्त्तव्य को पालन करते हुए, शुभ कार्य के ऊपर दृढ़ निश्चय रखते हुए आगे बढ़ना चाहिए, तो उसमें पूर्ण चन्द्र के तुल्य पूर्ण प्रकाश होता है।

अच्छा देखिए हमारा आज का वह दार्शनिक विषय यह था कि चन्द्र में जो भी कान्ति वह सब आदित्य, सूर्य जनित है। परन्तु परमात्मा की सृष्टि तो अनन्त के सदृश है, वेदों में ऐसा ही कहा है कि उस अनन्त परमात्मा की सृष्टि में तो अनेक सूर्य हैं। वह सूर्य कहाँ-कहाँ प्रकाश कर रहे हैं, यह तो एक दार्शनिक विषय है। हम जितना भी आगे बढ़ जायें परन्तु हमारी बुद्धि तो विचलित हो जाती है, कि कैसे महान् परमात्मा ने सब की सब विद्याएँ कैसे वेदों में प्रविष्ट कर दी हैं। यह भी तो साथ-साथ परमात्मा ने एक आत्मा के लिए कितनी सुविधाएँ दे दी हैं। मुनिवरो ! आज महानन्द जी प्रश्न कर रहे थे कि हमने जो असंख्य सूर्य होने का कहा है यह कौन से वेद का प्रमाण है? कौन ऋषि का इसमें प्रमाण है।

तो इसका उत्तर यह है कि वेदों का स्वाध्याय करो और अपने ज्ञान को बढ़ाकर अपने को श्रेष्ठ मानव बनाओ, तो महानन्द जी कहेंगे कि आपने कौन से वेदों का स्वाध्याय किया है जो आप उच्चारण कर रहे हैं? तो इसका उत्तर यह है कि वेदों में अनेक मन्त्रों में आया है कौन-कौन से मन्त्रों की सूची निर्देश की जाये, अन्य मन्त्रों में भी आया है यदि आगे फिर कभी समय मिला तो उनकी पूर्णतया व्याख्या कर देंगे?

अभी-अभी हमारा आदेश चल रहा था कि इस **मानव का उत्थान करने के लिए, परमात्मा का बनाया प्रत्येक पदार्थ मानव के जीवन का सूचक है।** आज मानव जीवन का एक ऊँची योजना बनाने का महान् साधन है। मानव को दृढ़ रहना चाहिए और इसी से वह चंद्र की पूर्णता सदृश घटता-बढ़ता हुआ

पूर्णता की पूर्ण कला के चंद्र के समान पूर्ण हो जाता है। मानव को उच्च बनाना ही उसका कर्त्तव्य है जो अति सुन्दर योजना है।

हम कह रहे थे कि विष्णु भगवान् सूर्य मंडल के राजा हैं, और प्रजा का शासन करने वाले हैं। दार्शनिकों ने कहा है कि देखें वह कितना महान् शासक है, कितनी भली प्रकार अपनी प्रजा तथा इस संसार का पालन कर रहा है। उसको महान् भू माना गया है, वह देखिए अन्तरिक्ष को तपायमान करता हुआ इस संसार को भी अपने अद्भुत आलोक से तपायमान कर रहा है और इसके आगे अपने मधु लोकों को भी तापित कर रहा है, वह तीनों लोकों को तापित कर रहा है, उसका तेज कितना मधुर है और सौन्दर्य है इसमें। कल का विषय और भी आगे बढ़ गया है, कि कहाँ-कहाँ, कितनी दूरी पर स्थित यह सूर्य मंडल है और कौन-कौन कैसे पाथिक। देखिए, यह पृथ्वी मंडल कैसा महान् हैं और अच्छा है, किस-किस लोक में ऐसी पृथ्वी समा जाती है यह तो कल का विषय होगा, जो अत्यन्त गूढ़ है और समय मिलने पर कल तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देंगे।

तो हमारा आज का आदेश था कि देवर्षि नारद जब महाराज नारायण के समक्ष पहुँच गए तो उन्होंने कहा **यदि तुम्हें मृतमंडल को सुखी करना है तो प्रत्येक मानव पूर्णिमा का उपवास किया करे यह शिक्षा दो और हर प्रकार से जीवन को उच्च बनाने की धारणा करें।**

नारद की विवेचना

तो मुनिवरो ! **नारद नाम मन का है,** नारद नाम के ऋषि भी हुए हैं। तो यह मन जब नाना प्रकार के विषयों को त्याग कर आत्मा के समीप हो जाता है तो यह मन, उस नारायण स्वामी से अपना सम्बन्ध बना लेता है तो उस समय नारायण महाराज कहते हैं कि ''हे मन तू बड़ा उचंग है तेरी मनोहरता का कोई प्रमाण

नहीं''। संसार को सुखी बनाने का यह एक मात्र आदेश है कि पूर्णिमा का व्रत धारण करें। यह उपदेश उस नारायण स्वामी ने नारद (मन) को दिया तो **नारद इस संसार में आकर उपदेश देता है कि जो मानव का हृदय पवित्र बनाता चला जाता है वह प्रत्येक व्रत को पूर्ण बनने का आदेश है,** अन्यथा किसी प्रकार मानव का जीवन ऊँचा नहीं बन सकता। यह मन रूपी नारद मन ही है। यह नारद किसी समय मानव को ऊँचा बना देगा और यदि मन रूपि नारद को स्थिर नहीं करोगे तो एक समय वानरों वाली आकृति बन जाएगी, और किस प्रकार बनेगी, ऐसे एक समय नारद जी चंचल हो गये और वानर वाली आकृति बन गई थी। ऐसे यदि मन बस में नहीं किया तो वह तुमको बानर तक बना देगा।

आज हमें विचार करना चाहिए कि मानव को बहुत उच्च बनना है, तो नारद नाम के मन को नारायण की सभा में प्रविष्ट होकर, और यह उपदेश लेकर, स्वतः उच्च बनेगा और शेष संसार को भी उच्च बनाएगा। तो यह विषय जब समय होगा, किसी दूसरे समय इसकी व्याख्या करेंगे, और हम कह रहे थे कि हमें विचार करना है कि हमें कहाँ पहुँचना है और कहाँ पहुँच चुके हैं और हमारा मन्तव्य क्या था, आज वह नारद शब्द नहीं रहा, आज जो कहा वह नारद रूपी मन है।

परन्तु यह निर्णय कर लेवें कि **परमात्मा को नारद क्यों कहा है,** परमात्मा के सदृश यह नारद, मन, लोक लोकान्तरों में व्याप्त हो जाता है, और कोई भी स्थान ऐसा नहीं जहाँ परमात्मा न हो, तो इस प्रकार देखे कि इस मन को जो प्रत्येक स्थान में पहुँच जाता है नारद कहा है जो एक क्षण भर में करोड़ों योजन की बातों को अन्तःकरण में विराजमान कर देता है तो इस अंतःकरण में अनेक चित्र खिंच जाते हैं, ब्रह्मलोक की बस्ती हमारे समक्ष आ जाती है।

देखिए द्वापर काल की वार्ताएँ आज हमारे मन रूपी नारद में विराजमान हो रही हैं। तो जैसे सर्वत्र व्यापक परमात्मा सब जगह विराजमान है तो उसी प्रकार, शरीर में यह मन एक प्रकार से नारद है जिसको यदि वश में नहीं किया गया तो इस मानव शरीर का कोई महत्त्व नहीं रहता।

देखो बेटा ! हम आदेश दे रहे थे और उस प्रभु की याचना कर रहे थे कि **परमात्मा ने देखो जो पदार्थ बनाये हैं वह हमारे जीवन को उच्च बनाने के लिए हैं जैसे सूर्य-चन्द्र हमारे जीवन के सूचक हैं।** जैसे सूर्य प्रातः समय से लोक-लोकान्तरों को तपित कर रहा है, इस प्रकार हमारा यह शरीर रूपी जीवन हमको प्राप्त हुआ वह मानो, परमात्मा ने हमको अपना तथा सबका उपकार करने के लिए दिया है, जीवन को उच्च बनाने का यह महान् कर्त्तव्य हमें सौंपा है। इस महान् कर्म में सब वस्तुओं का सदुपयोग का आदेश है और जो इसका दुरुपयोग करते हैं तो हमारे जीवन का कोई महत्त्व नहीं रहता।

महाराज–पाण्डु

अब द्वापर काल की कुछ बातें कह रहे हैं। द्वापर काल में महाराज पाण्डु की महारानी कुन्ती के तीन संतान उत्पन्न हुईं, तो माता कुन्ती ने उनको, कैसे महान् बालकों को जन्म दिया और कैसे उन्हें उच्च बनाया? अपने ज्ञान से, ऐसी शिक्षा दी कि वे महान् हुए।

एक काल था, जब मदीन राजा के यहाँ मधु कन्या थी। उसका स्वयँवर हुआ, राजाओं को निमन्त्रण भेजे गए कि मेरी कन्या का स्वयँवर है। उस महान् राजा के यहाँ कैसे वैज्ञानिक थे, उन्होंने एक मछली को बनाया और उसको ऐसे यन्त्र में रखा। जिससे कुछ ऐसी महानूता का प्रमाण मिलता है कि एक क्षण भर के समय में मानो इतने समय में बारह पलक मार सकता हो, उतने काल में

वह मछली चक्र में घूमती कि 708 चक्र उसकी परिक्रमा होती थी, ऐसा कहा जाता है। सब राजाओं को निमंत्रण पत्र आया और वहाँ एकत्र हुए, महाराज पाण्डु को भी निमन्त्रण पत्र आया। उसको लेकर महाराज पाण्डु भी महाराज गंगशील के समक्ष उपस्थित हुए, निवेदन किया कि मैं महाराज के अनुकूल निमन्त्रण पर जा रहा हूँ, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं जाऊँ अन्यथा नहीं। महाराज गंगशील ने कहा वहाँ जाकर क्या करोगे, वह तो कन्या स्वयंवर है और तुम पत्नीवान हो, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो तुम जाओ, वह कन्या तुमको स्वयंवर में वरण कर संस्कार करावेगी। सो मेरी तो इच्छा नहीं कि तुम वहाँ जाओ। महाराज पाण्डु ने कहा कि मैं प्रयत्न करूँगा कि वह संस्कार न करवाऊँ, परन्तु जो निमन्त्रण आया उस पर पहुँचना हमारा कर्त्तव्य है।

ऐसा सुना जाता है कि महाराज पाण्डु वहाँ पहुँचे, जहाँ नाना राजा, महाराजा विराजमान थे। उनका बड़ा सत्कार हुआ। तब समय पर सबने मछली को बेधन का प्रयत्न किया परन्तु कोई सफल नहीं हुआ। तो महाराज पाण्डु को कहा गया कि आप बेधन करें। तो महाराज पाण्डु ने कहा कि महाराज मेरा तो संस्कार हो चुका है और यदि मैंने मछली का बेधन कर दिया तो इस कन्या से संस्कार करना पड़ेगा, तो मेरा यह कर्त्तव्य नहीं। वेद शास्त्रों के विरुद्ध है और मेरे पिता की आज्ञा है, मैं कोई कार्य वेद, शास्त्रों के विरुद्ध नहीं करूँगा। परन्तु महाराज पाण्डु नम्र थे। तब ऐसा सुना जाता है कि सब राजाओं ने पाण्डु महाराज से निवेदन किया तो महाराज पाण्डु ने अपने अस्त्र शस्त्रों को लेकर मछली का छेदन कर दिया। छेदन होने पर मदीन राजा ने बड़ी नम्रता से कहा कि महाराज मेरी कन्या को स्वीकार करें। तो महाराज पाण्डु ने कहा मेरा कर्त्तव्य मछली को छेदन करना था सो मैंने कर दिया। इस पर सब राजाओं ने पाण्डव महाराज से कहा कि आपने कर्त्तव्य पालन कर स्वयँवर की प्रतिज्ञा को पूर्ण किया है तो आपको कन्या को स्वीकार

करना ही पड़ेगा, तब पाण्डु महाराज को स्वीकार करना ही पड़ा। तब माता, पिता ने कहा कि हमारा कितना सौभाग्य है कि जिसकी कन्या ब्रह्मचारियों के कुल में जाये और वेद पाठियों के कुल से हमारी कन्या का संयोग हो, हमारा अहोभाग्य है।

पाण्डु महाराज ने महान् सत्कार पूर्वक उस कन्या को ग्रहण किया। परन्तु मन में सोच रहे थे कि मैं अपनी पत्नी को, पिता को क्या कहूँगा, पत्नी जब पूछेगी कि आपने द्वितीय संस्कार करा लिया है तो क्या उत्तर दूँगा। इस प्रकार सोचते हुए वह कोडिल ब्रह्मचारी गंगशील के समक्ष जा पहुँचे और पूछने पर स्वयंवर का विवरण कहा और कहा कि अब मैं क्या करूँ? तो उन गंगशील महाराज ने कहा कि यह शास्त्रों के विरुद्ध है पर तुम ऐसा करो कि अपनी पत्नी की तथा सब की अनुमति लो। यदि तुम्हारी धर्मपत्नी आज्ञा दे तो अवश्य अपने गृह में इस कन्या को प्रविष्ट करो, उसका गृह पृथक होना चाहिए यह राष्ट्र का नियम है, पर यदि तुम्हारी धर्मपत्नी चाहे तो गृह में प्रवेश करो और आनन्द लो। उस समय महाराज, महारानी के समक्ष पहुँचे जो बहुत बुद्धिमता थी। उसने उनको स्थान दिया और पूछा कि भगवन् आपका हृदय क्यों दुःखित है? तो उन्होंने कहा कि मैं तुम्हारी अनुमति लेने के लिए उपस्थित हुआ हूँ। और संस्कार का सब विवरण कहा तो महारानी कुन्ती ने कहा कि आप इतना संकोच क्यों कर रहे हैं, निःसंकोच होइये। यह कहा कि निर्द्वन्द होकर उस कन्या को ले आइये। यह तो हमारा आहोभाग्य है कि हम दोनों एक माता की पुत्री समान रहेंगी। मानो उस माता ने आदेश दिया कि मेरे तीन पुत्र हैं और व्यास महर्षि की आज्ञानुसार ब्रह्मचारी का व्रत धारण किया और उस गृह में आनन्द पूर्वक प्रवेश और उस कन्या को आदेश दिया कि वेद शास्त्रों के अनुकूल पुत्र उत्पन्न करना, जो सबको सुख पहुँचाने वाले हों। कुछ काल पश्चात् उसके गर्भ स्थापन हुआ और नकुल की उत्पत्ति हुई।

कुछ समय पश्चात् महाराज पाण्डव मंत्रियों सहित भ्रमण करते हुए व्यास मुनि के तथा महाराज महर्षि उदकेतु मुनि के समक्ष जा पहुँचे, उस समय वह स्वाध्याय कर रहे थे। जब विनाश काल आता है तो बुद्धि का भ्रंश हो जाता है–'विनाश काले विपरीत बुद्धि'। ऐसा कहा जाता है कि उस समय उन्होंने अपने शस्त्र, अस्त्रों का प्रयोग किया तो वह शस्त्र उस ऋषि के अन्दर प्रविष्ट हुआ और हृदय स्थल में जा पहुँचा। तो उस समय ऋषियों ने अपने वाक्यों में कहा 'अरे पापी राजा तेरा विनाश हो। उस समय ऋषियों ने अपने वाक्य में कहा कि अपनी दृष्टि से देख किसी समय ऐसा आयेगा, कि तुमने हिरनी को इस प्रकार नष्ट किया है तुम्हारी अपनी पत्नी तुम्हारी मृत्यु का कारण बन जाएगी।

पूज्य महानन्द जी - महाराज आप तो कहते थे कि किसी को शाप नहीं लगता और शाप का उच्चारण कर रहे हैं?

महानन्द जी आप भी कैसे मूर्खों सदृश प्रश्न करते हैं और तुम भी जानते होंगे कि योगी उसको शाप देता है...एक आयुर्वेद नाम की विद्या है जिससे मस्तिष्क को देख योगी जान लेता है इस काल में उसकी मृत्यु होगी। जो योगी सत्य का पालन करता है उसका वाक्य सत्य हुआ करता है। योगी उसको शाप देता है जो कोई ज्ञानी होकर भी दूसरों को दुखित करता है, जानता हुआ भी दूसरों को कष्ट दिया करता है और जो अज्ञानावश, अज्ञानी होने के कारण किसी को कष्ट देता है, उसको शाप देता है, तो उस शाप देने वाले की महानूता नष्ट हो जाती है, उसकी यौगिकता समाप्त हो जाती है। और जैसे तुम जानते हो, और तुम योगी होकर भी, यदि हमको नाना प्रकार से कष्ट देने लगो, तो हम जो वाक्य (शाप) कहेंगे वह होगा, उससे किसी प्रकार बाधा न होगी, इसका कारण तुम ज्ञानी हो। और यदि तुम अज्ञानी होकर अज्ञानतावश हमें दुखित करो तब हमारा वाक्य (शाप), वास्तव में हमारी अज्ञानता

का प्रमाण होता, हमारी सब तपस्या का फल समाप्त हो जाता। ऐसा इसका समाधान है। महाराज पांडव जानते हुए भी, योगी होकर, विनोद क्रिया से, किसी को अस्त्रों से समाप्त करते हैं तो वह वास्तव में पापी हैं, और उनको उसी प्रकार का दंड मिला - परमात्मा के नियमानुसार दंड मिला।

अब आगे देखिए, जब महाराज पांडू को यह वाक्य का पता लगा तो वह सोचने लगे, कि मैं पत्नी के द्वार जाऊँगा ही नहीं क्योंकि मेरी मृत्यु हो जाएगी। मैंने सर्व संसार का ऐश्वर्य सुख प्राप्त कर लिया है, पत्नी के समक्ष न जाने का नियम बना लिया। तो कुछ काल पश्चात् महारानी कुन्ती जो बुद्धिमत्ती थी, यह सब जान गयी किन्तु महाराज पांडु काल की गति से उसके (माद्री) समक्ष जा पहुँचे और उसको गर्भ स्थापन हुआ और महाराज पांडु मृत्यु को प्राप्त हुए। कुछ काल पश्चात् उनका पाँचवा पुत्र रानी माद्री के गर्भ से उत्पन्न हुआ, जिसे सहदेव कहते हैं।

पूज्य महानन्द जी – परन्तु गुरु जी हमने तो ऐसा सुना है कि ऋषियों ने जो शाप दिया था वह तो पहले ही दिया था? और गुरु जी जो आप कहें केवल वही सत्य और जो हमने कहा वह नहीं?

महानन्द जी यह तो कोई विरोध का विषय नहीं, इसका निर्णय करो।

पूज्य महानन्द जी – अजी हमने तो ऐसा सुना है कि 'पाण्डु को पहले ही शाप था और पाण्डु को रोग था और दुर्वासा मुनि के मंत्रों के बल से उनके पुत्र उत्पन्न हुआ।

हाँ यह भी कोई विरोध की बात नहीं। पुनः हास्य.....यदि तुम मूर्ख समाज में होते तो बड़ा आनन्द आता। तुम्हारे वाक्य तो

महाबच्चों के सदृश हैं। हास्य....कैसे-कैसे वाक्य उच्चारण कर रहे हो। वेद के अनुकूल भी नहीं चलते, अपने विषय को भी वेद से विपरीत ले जाते हो। और यथार्थ तो यह है कि हमने जो सत्य था कह दिया है। अब तुम्हारी इच्छा हो तो उसको मान लो। हमें कोई आपत्ति नहीं, जैसा हमने सुना और देखा वह तुम्हारे सामने है, जिसको चाहो, वैसा मानो, इसमें किसी को कोई आपत्ति नहीं। परन्तु यह अवश्य है कि यदि तुम ऐसे अज्ञानता के वाक्य मानते रहोगे, तो समाज और अज्ञानता में डूब जायेगा।

अच्छा मुनिवरो ! अभी हमारा आदेश चल रहा था कि महानन्द जी की बातों से विनोद पा गये। देखिए हमने अभी द्वापर और त्रेता का समय और काल की महानूता का वर्णन किया है और हमें उससे ऐसा प्रतीत होता है कि उन महान् माताओं के समान आज भी उसी प्रकार की उच्च देवियाँ उत्पन्न होती रहें तो राष्ट्र का शीघ्र ही कल्याण हो जाए, और यह सँसार महानूता पर पहुँच जाए।

आज का हमारा आदेश समाप्त हुआ, कल समय मिलेगा तो दार्शनिक समाज के सम्मुख कुछ दार्शनिक विषय की व्याख्या करेंगे। और समय मिला तो महानन्द जी की भी वार्ता होगी अच्छा, हास्य. .., तो हमारा आज का आदेश समाप्त हो गया है। कल आदेश इसके आगे उच्चारण करेंगे। अब वेदों का पाठ होगा और फिर इसके पश्चात् यह वार्ता समाप्त हो जाएगी।

दिनांक : 6 अप्रैल, 1962

स्थान : विनय नगर,

नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

योगेश्वर श्री कृष्ण भगवान्

पूज्य महानन्द जी – गुरुदेव ! यह आप क्या उच्चारण कर रहे हैं? भगवान् कृष्ण ने ठोकरों से एक वृक्ष को गिराया। उस वृक्ष से दो बालक उत्पन्न हुए।

"कैसे हुए? हमने जाना नहीं।"

पूज्य महानन्द जी – वह इस प्रकार कि एक समय मार्ग (वन) में महाराजा कृष्ण ग्वाल बाल बने हुए थे। उन्होंने ठोकरों से एक वृक्ष को गिराया। उस समय वहाँ कुबेर के दोनों पुत्र उस वृक्ष से उत्पन्न हुए।

महानन्द जी ! क्या करें मानव ने इस रहस्य को भी नहीं जाना। यह तो सम्भव हो सकता है या माना जा सकता है कि महाराजा कृष्ण के पदों से महान् वृक्ष गिर जाए। परन्तु परमात्मा के नियम और सिद्धान्त के विरुद्ध वृक्ष से मानव योनि उत्पन्न हो गयी हो, यह कैसे जाना जा सकता है?

पूज्य महानन्द जी – गुरुदेव ! जब भगवान् कृष्ण को भगवान् मानते हैं तो भगवान् जो चाहें कर देवें।

हाँ, महानन्द जी ! तुम्हें भी भगवान् कहने लगें तो तुम भी ऐसा ही करोगे।

पूज्य महानन्द जी – नहीं भगवन् ! हम क्यों करते?

जब तुम नहीं करोगे तो बेटा ! महाराजा कृष्ण ने कैसे किए? भगवान् कृष्ण के भगवान् होने का तुम्हारे पास क्या प्रमाण है?

पूज्य महानन्द जी – गुरुदेव ! यह प्रमाण है कि उनको भगवान् कृष्ण माना जाता है। उनको पूर्ण ब्रह्म माना जाता है।

अरे ! किसने माना है?

पूज्य महानन्द जी – गुरु जी ! हम मान रहे हैं और कौन मानता है?

अरे ! वही मनमानी वार्ता? तुम्हीं मान रहे हो या किसी ऋषि-मण्डल ने भी माना है? सबसे पूर्व इसमें यह आदेश है कि यदि आज महाराजा कृष्ण को भगवान् के रूप में मान लेते हैं या पूर्ण ब्रह्म मान लेते हैं तो बेटा ! उनकी महत्ता में भी विच्छेद आ जाता है, क्योंकि परमात्मा का नियम यह नहीं कहता है। अर्थात् यदि परमात्मा ही स्वयँ अपने ही नियमों को तोड़ने लगे तो उनकी महत्ता ही नष्ट हो जाती है। दूसरे सर्वशक्तिमान परमात्मा को जन्म धारण करने की क्या आवश्यकता है? परमात्मा तो निराकार रहते हुए भी जिस वस्तु की रचना कर देते हैं, उसका नाश भी वे निराकार होते हुए ही कर सकते हैं। क्योंकि परमात्मा तो निराकार होते हुए सर्वशक्तिमान भी है।

यदि महाराज कृष्ण वृक्षों से मनुष्य उत्पन्न करने वाले होते तो इस परमात्मा की सृष्टि में आज माता-पिता की अर्थात् देवकन्याओं और मानवों की तो आवश्यकता ही नहीं रहती। मानवोत्पत्ति के नियम बनाने की ही फिर क्या आवश्यकता थी? वे हमारे कहे अनुसार तो जैसे वृक्षों पर फल लगते हैं मनुष्य भी लग जाया करते।

तो मुनिवरो ! वह ऐसा नहीं है। वास्तव में मानव ने इस रहस्य को जाना नहीं। सबसे पूर्व उत्तर यह है कि महाराज कृष्ण योगेश्वर थे, महान् एवं विचित्र थे। अपने समय में बहुत बड़े बुद्धिमान थे। अपने समय में वेदों के प्रकाण्ड पण्डित थे। महाराजा कृष्ण का ऐसा प्रबल आत्मा था कि दूसरों का आत्मा उनके आत्मिक-बल से प्रभावित होकर उनके ही आदेशों पर चलने लगता था।

महाराजा अर्जुन के मोह में फँस जाने पर योगीराज कृष्ण ने अपनी योग-शक्ति के द्वारा पहले उसके मोह के नाश के लिए विराट् रूप दिखा कर केवल एक ही आदेश दिया था। महानन्द जी ! इस पर तुम तो यह कहोगे कि विराट रूप तो एकमात्र परमात्मा का ही होता है। महाराजा कृष्ण ने कैसे दिखा दिया?

नहीं, नहीं, योगियों का भी विराट रूप होता है। योगी इस पञ्चमहाभौतिक मानव शरीर में रहते हुए विराट रूप दिखा सकते हैं। इससे दर्शक चकित हो जाता है। उसकी चँचल मानसिक वृत्तियाँ केन्द्रित हो जाती हैं। दर्शक का अज्ञान समाप्त हो जाता है।

महाराजा कृष्ण ने अर्जुन से यही कहा था कि ''हे अर्जुन ! तू अपने को मुझे अर्पण कर दे। जैसे कोई जिज्ञासु किन्हीं महान् गुरु के समक्ष अपने अज्ञान का नाश कराने जाता है। उस समय गुरु उसके अज्ञान नाश के लिए जिज्ञासु से कहता है कि हे शिष्य ! तू अपने को मुझे अर्पण कर दे, मुझको अर्पण करने से तुझे ज्ञान हो जाएगा, तेरा अज्ञान नष्ट हो जाएगा।

बेटा ! एक वार्ता हमारे कण्ठ आ गई। एक महान् ऋषि थे। एक राजा उनके समीप जाया करते थे। उनकी बहुत सेवा किया करते थे। परन्तु उस राजा की प्रजा नाना चिंताओं में मग्न थी। इसलिए उनकी प्रजा बहुत दुखित थी। इसी से राजा भी बड़ा दुःखित था। ऐसी दशा में राजा ने मन में सोचा कि भाई ! तेरे बस का राज्य करना नहीं है। अब क्या करना चाहिए?

मुनिवरो ! यह चिन्तित राजा ऋषि के पास पहुँचा। राजा ने ऋषि जी से निवेदन किया कि ''देखो महाराज ! राज्य मेरे बस में नहीं आ रहा है। इसलिए मैं तो संन्यास लेना चाहता हूँ।''

उस समय ऋषि जी ने कहा, ''आप अपना राज्य अपने पुत्र को दे दो।''

राजा ने कहा, महाराज ! पुत्र तो अभी सूक्ष्म (छोटा) है।

तब ऋषि जी ने कहा, यदि राज्य पुत्र को नहीं देते तो राज्य मातेश्वरी (रानी) को दे दो।

राजा ने कहा कि मातेश्वरी (रानी) से भी कार्य नहीं चलेगा।

तब ऋषि ने कहा, 'हे राजन् ! उस राज्य को मुझे दे दो।''

उस समय राजा ने उत्तर में कहा कि ''अच्छा भगवन् ! आप ले लीजिए।''

मुनिवरो ! तब राजा ने उस राज्य का सँकल्प पूर्वक ऋषि जी को दान कर दिया।

उस ऋषि जी ने पूछा कि हे राजन् ! अब तुम कहाँ जाओगे?

उस समय राजा ने कहा कि हे राजन् ! कोष में से कुछ द्रव्य लेकर दूसरे राज्यों में जाकर कुछ व्यापार करके अपना निर्वाह करूँगा, अपने उदर की पूर्ति करूँगा।

उस ऋषि ने कहा कि हे राजन् ! कोष का द्रव्य तो राज्य का है और राज्य अब मेरा है, तुम्हारा नहीं।

राजा ने कहा कि महाराज ! यह भी सत्य है, मैं वैसे ही चला जाऊँगा। दूसरे राष्ट्र में जाकर किसी का सेवक ही बन जाऊँगा।

तब ऋषि जी ने कहा, ''अरे ! जब तुम्हें सेवक ही बनना है तो तुम मेरे ही सेवक क्यों न बनो, मेरा सेवक बन कर राज्य का कार्य करो। जनता को कहो कि यह राज्य मेरा नहीं है मेरे गुरु का है। गुरु का भय करो। निष्काम-वृत्ति से जीवन के भोगों को भोगते हुए राज्य का कार्य करते रहो। निष्काम-वृत्ति से तुम्हारा जीवन इन चिन्ताओं से पृथक् हो जाएगा। जीवन स्वच्छ बन जाएगा।

राजा ने वैसा ही किया। ऐसा करने से प्रजा में शान्ति हो गई।

इसी प्रकार से महाराजा कृष्ण ने अर्जुन से कहा था कि ''हे अर्जुन अपनी जीवन योजना मेरे अर्पण कर दें। तब तुझे कोई चिन्ता नहीं रहेगी।''

मुनिवरो ! इसलिए महाराज कृष्ण ने अर्जुन से जो कुछ कहा है यथार्थ कहा है। पहले जिज्ञासु को गुरु के समीप जाकर अपनापन त्यागना पड़ता है। गुरु को भी प्यारे जिज्ञासु को अपनाना पड़ता है। गुरु की कृपा से जब जिज्ञासु का अज्ञान नष्ट हो जाता है, तब वह (जिज्ञासु) परमात्मा के अधीन हो जाता है।

आज मानव को बहुत ऊँचा विचार करना चाहिए। वास्तव में महाराजा कृष्ण के जीवन को वास्तविक रूप में जाना ही नहीं। योगेश्वर महाराजा कृष्ण की यौगिकता एवं उनके चरित्र को नाना प्रकार से लाँछित कर दिया है। अनेक प्रकार की भ्राँतियाँ लोगों ने फैला दी हैं।

योगेश्वर श्रीकृष्ण का महत्त्व

मुनिवरो ! जब मानव रूढ़िवादी बन जाता है और रूढ़िवादी बन करके उस महान् योगेश्वर कृष्ण को भगवान् मान लिया जाता है तो उस महान आत्मा पर लांछन लगाकर अपने स्वार्थ को पूरा करना चाहता है; यह हमारी मूढ़ता नहीं तो और क्या है? यह हमारी अज्ञानता नहीं तो और क्या है? जिन्होंने अपने दर्शनों को नहीं जाना, जिन्होंने अपने वेदों को नहीं जाना और परमात्मा की वाणी (वेद) पर विचार नहीं किया, यह उनकी अज्ञानता नहीं तो और क्या है?

मुनिवरो ! हम महाराजा योगेश्वर कृष्ण के शब्दों को नाना प्रकार का आदेश दिया करते हैं। उन महान् आचार्यों व योगियों के कितने बड़े आभारी हैं, जिन्होंने बेटा! षोडश कलाओं को जाना हो और समय के अनुसार नीति को बरतते हुए सँसार का पुनः उत्थान किया हो।

आज मानव को विचारना चाहिए कि महाभारत का इतना सँग्राम केवल महाराजा कृष्ण का ही कर्त्तव्य था। जैसी राजनीति देखी, जैसा समय देखा उसके अनुकूल व्यवहार किया। यह केवल उन्हीं की योग्यता थी। महाभारत काल में यहाँ भौतिकता बहुत बढ़ गई थी। नाना प्रकार के यन्त्र बन गए थे। महाराजा अम्बरीश के पास एक ऐसा यन्त्र था कि जिसके एक बार प्रयोग से ही नौ अक्षोणी सेना समाप्त करके यन्त्र उनके पास वापस आ जाता था। ऐसे-ऐसे यन्त्र थे जिनके प्रयोग से पृथ्वी में विशाल खड्डे हो जाते थे, बड़े-बड़े जलाशयों को सुखाकर भूमि में बदल देते थे। जहाँ भौतिक विज्ञान से ऐसे यन्त्र का निर्माण कर एक-दूसरे को नष्ट करने की योजनाएँ बनाई जा रही थीं, वहीं महाराजा कृष्ण ही ऐसे महान् योगी थे जिन्होंने महाभारत जैसे विनाशकारी युद्ध को रोकने का यत्न किया, परन्तु जब कुछ न हुआ तब महाभारत का युद्ध कराया।

मुनिवरो ! कितना विशाल संग्राम ! आज मानव चकित होता चला जा रहा है। इस संग्राम में सभी बुद्धिमान व वैज्ञानिक समाप्त हो गए, परन्तु क्या करें। जैसा मानव का समय होता है उसी के अनुकूल वातावरण बन जाता है। यह मानव के आँगन में आने वाला विषय नहीं यह तो केवल परमात्मा की महानूता है जिसके आदेश से यह कार्य चल रहा है। मानव तो प्रयत्न कर सकता है वह भी सीमित, असीमित नहीं। परमात्मा इतना अनन्त है वह सभी कुछ समय के अनुकूल करा देता है।

मुनिवरो ! देखो उस महान् योगी ने अपने जीवन में एक ऐसे महान् यन्त्र को खोजा, जिसको अब तक केवल दो ने जाना है। त्रेता के काल में महाराजा लक्ष्मण जी ने और द्वापर में महाराजा कृष्ण ने। महाभारत के संग्राम का जितना आँगन (मैदान) था उसके चारों ओर एक यान्त्रिक रेखा का महाराजा कृष्ण द्वारा प्रयोग किया गया था, जिसके कारण संग्राम के यंत्रों का दूषित प्रभाव उस रेखा से बाहर न जा सका अर्थात् संग्राम भूमि से बाहर अन्य प्राणियों पर उन यन्त्रों का कोई दूषित प्रभाव नहीं हुआ था। बेटा ! इसको 'स्वानमाम' की रेखा कहते हैं। यह क्या है? यह महान् योगिकता और महान् वैज्ञानिकता है जिसमें षोडष कलाओं को जाना जाता है।

आज हम उन महान् आत्माओं का कहाँ तक गुणगान करें। जैसे परमात्मा अनन्त है, उसके गुण अनन्त हैं, ऐसे ही महान् व्यक्ति अनन्त गुणों के होते हैं। मुनिवरो ! आज हमें विचारना चाहिए और जैसा मानव, जैसा योगी हो उसको वैसा उच्चारण करने में मानव का कोई दोष नहीं, कोई आपत्ति नहीं।

अहा ! परमात्मा को भिन्न-भिन्न रूपों में अवश्य पुकारना चाहिए परन्तु देखो परमात्मा इतना न्यायशील हैं, महान् सर्वज्ञ हैं, सर्व शक्तिमान हैं, हम उसको यह कहें कि परमात्मा योगी बन करके आ गया। अरे ! परमात्मा तो योगियों का योगी है। आज वह सँसार में सीमित बन करके क्यों आएगा? जो महान् का भी महान् है वह सँसार में अल्प बन करके क्यों आएगा?

पूज्यपाद-गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

श्रीमति इन्दु त्यागी व श्री विपिन भारद्वाज निवासी ग्राम-रेई, मुजफ्फरनगर, उत्तर प्रदेश ने अपने सुपुत्र रक्षित त्यागी के जन्मदिन के शुभावसर पर 1100 रु. का सात्त्विक सहयोग समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए प्रदान किया है। यह परिवार पूज्यपाद गुरुदेव के साहित्य का अध्ययन करते हुए अपने जीवन को यज्ञमय बनाने में निरन्तर संलग्न है और समय-समय पर जनकल्याण के कार्य के लिये समिति को अपना सहयोग करने में कटिबद्ध है जिसके लिए हार्दिक धन्यवाद करते हैं और सुपुत्र को जन्मदिन की बारम्बार शुभकामनाएं देते हुए समस्त परिवार के लिए दीर्घ आयु, सुख, शान्ति, सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

॥ ओ३म् ॥

राष्ट्र कल्याण चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा और पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की पावमानी प्रेरणा से यज्ञ प्रचार समिति पटेल नगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश के पवित्र एवम् शुभ संकल्प से राष्ट्र कल्याण चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग का आयोजन ए-ब्लाक, मन्दिर पार्क, पटेल नगर-II, गाजियाबाद के प्रांगण में दिनांक 29 सितम्बर, 2013 से 6 अक्टूबर, 2013 तक आप सबके सहयोग से आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सभी अपने परिवार, सगे सम्बन्धियों एवम् मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

निवेदक : समस्त गाजियाबाद क्षेत्रवासी

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएडा	125 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
श्री राहुल शर्मा, बैंगलोर	100 रुपये
श्री पराग शर्मा, नोएडा	100 रुपये

सूचना

वैदिक अनुसन्धान समिति (पंजी.) के सभी आजीवन सदस्यों को सूचित किया जाता है कि समिति की साधारण सभा की आगामी बैठक दिनाँक **15 सितम्बर, 2013** को दिन, रविवार को दोपहर 3 बजे A-84 मालवीय नगर, नई दिल्ली पर होनी निश्चित हुई है। जिसमें सभी आजीवन सदस्यों को समय पर पहुँचकर भाग लेने के लिए सादर आमन्त्रित किया जाता है। बैठक में निम्न विषयों पर विचार-विमर्श होगा :-

1. पिछली साधारण सभा की कार्यवाही की पुष्टि।
2. साहित्य प्रकाशन सम्बन्धी सभी विषयों पर विचार-विमर्श।
3. समिति के पिछले वर्ष के आय व व्यय के ब्यौरे की पुष्टि और अगले वर्ष के आय-व्यय के अनुमानित बजट पर विचार-विमर्श।
4. नये आजीवन सदस्यों की पुष्टि।
5. अन्य प्रश्न प्रधान जी की अनुमति से।

मन्त्री

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

उद्‌बोधन

हे मानव ! तू अपने जीवन को महान् और सुन्दर बना। जीवन को महान् और सुन्दर बनाने के लिए वेद ने घोषणा की है। वेद अमानवता की घोषणा नहीं करता। **वेद तो मानवता की घोषणा करता है।** विचार यह है कि आज हम मानव बनें। क्योंकि वेद का ऋषि यह कहता है "मन वाचः प्रवे यौनस्तम् योनप्रवः मनुवाचः अस्वति देवः"। ऋषि कहते हैं मानव शरीर न मानव है और न आत्मा है। यह जो शरीर प्रभु ने दिया है, यह उस प्रभु की धरोहर है अथवा देन है जिसके ऊपर हमें विचारना है। परन्तु रहा यह वाक् यह हमारा जो मानव शरीर है यह योनिज शरीर है। **परन्तु मानव को मानव बनने के लिए कहा है।** मुनिवरो ! शरीर के आकार से ही मानव नहीं बनता है। ऋषि-जन कहते हैं कि मानव का यह शरीर है परन्तु इस शरीर से ही मानव नहीं कहलाया जाता। **"मानव वह होता है जो मननशील होता है।"** जो प्रभु के राष्ट्र में मनन करता है क्या वस्तु मनन करता है? और ज्ञान और विज्ञान के मनन करने में उस दिव्य महान् प्रभु के आनन्दमय स्वरूप को दृष्टिपात करता है।" क्योंकि हमारे जीवन का जो स्तम्भ है, सँसार का जो स्तम्भ है बेटा ! वह मेरा प्यारा प्रभु कहलाया गया है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 41 : अंक : 491
अगस्त 2013

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा
वैदिक अनुसन्धान समिति पञ्जी०
के लिए नवप्रभात प्रिटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर
सी-38, शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष :
011-26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-08-2013
Published on 5th day of the same month